सत्य सिद्धान्त और योग साधना

ओम तत्सदात्मने नमः

अध्यात्म–साधना का सही रास्ता मिल जाने पर बाहर के भेदभाव नहीं रह जाते। भेद है ही नहीं। जो नाथ ले काम क्रोधादि को, वह नाथ है। और जो काया को वीर बना ले, काम –क्रोध आदि को जीत ले वह कबीर है। तो ये महात्माओं के सम्प्रदाय सब एक ही हैं। अब समझ में आ गया होगा, कि जो मुनि है, वही ऋषि है। जो त्यागी है, वही वैरागी है, वही नाथ है। जो नाथ है, वही ब्राह्मण है। और जो ब्राह्मण है, वही विप्र है। इसलिए इनमें कोई अन्तर नहीं है। ये डिग्रियाँ हैं। ईश्वर को जो पा जाता है, ईश्वर को जो समझ लेता है, ईश्वरमय बुद्धि जब हो जाती है, उसके लिए ये अंतर्जगत से, उसके मायने हो जाते हैं। उसके अन्तर्जगत से, वह चीज़ दिखाई पड़ने लगी, तो उसी का वह नामकरण हो गया। अब इसको ठीक से समझना है, तो देखिये, शुरू–शुरू में जब हमारे ऋषि–मुनि थे। सारा समाज, उन्हीं के अनुसार चलना चाहता था। उन्हीं की मान्यता थी। उस समय की पद्धति आज नहीं है। उस समय उनके आश्रम में, शुरू में जो आता था, वह छुद्र या शूद्र कहलाता था–छोटा कहलाता था। और जब रहते–रहते कुछ जान गया, तो वैश्य कहलाता था। अन्तःकरण में जो हानि–लाभ अर्थात् सजातीय–विजातीय को बढ़ाना घटाना–यह व्यापार, जो समझ जाय, तो फिर वैश्य हो जाता है। और फिर जब कुछ दिन और महापुरुष की सेवा में रहता है, तो फिर क्षत्रिय हो जाता है। क्षत्रिय के लक्षण यह हैं, कि वह अपने अन्तःकरण का, अच्छी तरह से विभाजन कर लेता है। सजातीय–विजातीय को समझ लेता है। एक ओर काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर, अभिमान, कपट, ईर्ष्या, द्वेष, तृष्णा आदि का दल है, और दूसरी ओर ज्ञान, विवेक, वैराग्य, सत्य, क्षमा, सन्तोष, दया आदि का दल खड़ा करके, दोनों में संघर्ष कराके, विजातीयों पर विजय पा लेता है। तब फिर वह, ब्रह्म की प्राप्ति कर लेता है, और ब्राह्मण हो जाता है। लेकिन इधर बाद में, जब धीरे–धीरे समाज बढ़ने लगी, तो अपभ्रंश हो गया, इनके नाम का। सब अपने–अपने काम से भटक गए। अपनी–अपनी जाति बना लिया। तो छुद्र से शूद्र हो गए। समाज बढ़ जाने से, जाति के रूप में लोग अपने को पुकारने लगे। क्रिया–कर्म और साधना रह न गई। लोग बस नाम के शूद्र, वैश्य, क्षत्रिय और ब्राह्मण रह गए। कोई सिंह लिखने लगा, तो कोई कुछ। नकल रह गई, असल खतम हो गई।

ऐसे तो सब ऋषियों की संतान हैं। कोई गौतम के हैं कोई शांडिल्य के हैं, कोई वशिष्ठ के हैं, कोई गर्ग के हैं, कोई भारद्वाज के हैं–गोत्र तो वही हैं, लेकिन

सब बिगड़कर अपभ्रंश हो गया। अब उनमें है, कुछ नहीं–न तो विप्र हैं–जो विप्र के लक्षण होते हैं वो हैं नहीं। न तो ब्राह्मण हैं–ब्रह्म उनके अंदर प्रादुर्भूत होकर विराजमान हो, ऐसा भी नहीं है। तो केवल नाम भर के हैं।

कुछ काल बाद फिर कुछ समाज सुधारकों ने इसका तरीका निकाला। सन्यास एक मार्ग निकाला, वैराग्य का मार्ग निकाला, उदासीन मार्ग निकाला–ऐसे कुछ मार्ग निकाले। इतिहास हमें बताता है, कि ऐसे समाज सुधारक हुये हैं। पुराना तरीका तो अपभ्रंश हो चुका था। अब जो साधना करते ही नहीं–ब्रह्म से मतलब नहीं रखते, वे भी ब्राह्मण कहे जाने लगे। जो संघर्ष की क्रिया जानते ही नहीं, घर में बैठे हैं, वे भी क्षत्रिय कहे जाने लगे। तो फिर कुछ मनीषियों ने नए शिरे से, साधकों का वर्गीकरण किया। जिनमें कुछ शैव हैं, कुछ वैष्णव वैरागी हुए, ऐसे फिर हुआ क्या, कि इसमें हजारों किस्म के संप्रदाय खड़े हो गए। राम उपासक अनेक सम्प्रदाय हो गए, देवी के उपासक अनेक हो गए, शिव के उपासकों के अनेक सम्प्रदाय हो गए, कृष्ण के उपासकों के अनेक संप्रदाय हो गए। तब फिर ब्रह्म शब्द को हटा कर सन्यास शब्द कर दिया गया। सन्यास जिसने कर लिया, संसार का त्याग कर लिया, तो मानो ठीक हो गया। संसार कहते हैं, जो संसरण करता है–जो चलता है, चलायमान है। जो चले उसका नाम है–संसार। दुनिया–जो दो से बनी है दो कौन? वे दो, जो एक दूसरे के अपोजिट (विलोम) हैं–जैसे दिन–रात, हँसी–रुलाई, सुख–दुख ये दोनों, एक साथ नहीं मिलते। इसलिए जिसमें ये दोनों रहते हैं– उसका नाम है दुनिया। लेकिन दुनिया में सब लोग सुख चाहते हैं, दुख कोई चाहता नहीं है। और सुख बगैर दुख के हो नहीं सकता। सुख का पूरक दुख है। दुख का पूरक सुख है। रात, दिन को पैदा करती, और दिन, रात को पैदा करता है। तो अगर यह युक्ति मिल जाय। यह समझ में आ जाय, तो हम भ्रम से दूर हो सकते हैं। प्रकृति की नियमावली, समझ में आ सकती है। कि यह क्या चीज़ है, यह कैसे सर्कुलेशन कर रही है? यह सर्कुलेशन आटोमैटिक है, स्वाभाविक है। जो चीज़ स्वाभाविक होती है, वह किसी के दिल–दिमाग की बात, इच्छा की बात नहीं रह जाती। वह प्रवृत्ति हो जाती है।

इसलिए न तुम ब्राह्मण के पीछे पड़ो, न क्षत्रिय के पीछे पड़ो, न वैश्य के पीछे पड़ो, न शूद्र के पीछे पड़ो, तुम केवल भगवान के पीछे पड़ो। अगर तुम्हें पता लगाना है तो। और दूसरा कोई रास्ता नहीं है। अगर तुम भगवान को छोड़कर दूसरी तरफ जाओगे, तो मारे जाओगे। तुम्हारा कोई अता–पता नहीं रह जायेगा। एक ही रास्ता है–तुम्हें किसी चीज़ की जानकारी करनी है, तो ईश्वर के पीछे लगो। उसमें चाहे कितनी भी कीमत चुकानी पड़े। चाहे कितनी भी परेशानी उठानी पड़े, चाहे कितनी भी

मेहनत करनी पड़े, लेकिन उसके पीछे लगो। वह तुम्हें हर चीज बता सकता है। वह एक ऐसा तत्व है, जो पहले भी था, अब भी है, आगे भी रहेगा। वह काल करके बाधित नहीं होता। वह देश करके बाधित नहीं होता–उसी का नाम है परमात्मा। इसलिए जो हमने बताया था, कि समुद्र से पानी, बादल बनकर उठा, और यहाँ–वहाँ बरस जाता है। फिर इकट्ठा होकर नाली बना लेता है नाली से नाला, नाला से नदी और फिर समुद्र में पहुँच जाता है। वैसे ही हम लोग भी अंशभूत के समान हैं। इसलिए मनुष्य मात्र का धर्म है, कि अपने अंशी परमात्मा से मिलें। हम उसके अंश हैं, परमात्मा हमारा अंशी है। उससे हमें मिलना ही है, चाहे कितनी भी परेशानी आवे। दिक्कत जब मिले, तो दिक्कत को आराम मान ले। क्योंकि तमाम परीक्षा होगी, इसलिए तमाम कहानी कुछ बताती हैं। एक मजनू था, एक कोई लैला थी, एक शीरी थी एक फरहाद था, यह कहानी सुनी होगी। इस कहानी से हमें कुछ लेना–देना नहीं है, लेकिन अपना मतलब निकालना चाहिए। मजनू यह मन है। लैला वह लगन है, जो परमात्मा के लिए हृदय में जाग्रत होगी, लेकिन यह लगन अटूट होनी चाहिए। जितनी तीव्र लगन होगी–उतनी ज़्यादा प्रगति होगी, उतना ज़्यादा फायदा होगा।

लैला एक राजा की लड़की थी। किसी जतन से देख लिया मजनू ने। देखकर वह पागल हो गया बस एक ही धुन लग गई। लैली–लैली, न खाय न पिये। अब चारों तरफ हल्ला हो गया। लोगों ने बादशाह को बताया, कि आपकी लड़की की बदनामी हो रही है–चारों ओर। यह कुंजड़े का लड़का, उसके पीछे पागल हो रहा है। तो राजा ने कहा–पकड़कर मार दो। गोली मार दो उसे। तो उस लड़की ने सुना। समझदार लड़की थी। उसने कहा पिता जी, ऐसा न करिये। अगर मार दिया जायगा, तो तसदीक हो जायगा कि ज़रूर कोई बात थी, जबकि कोई ऐसी बात है नहीं। तो मैं एक युक्ति बताती हूँ–वह करिये। सब ठीक हो जायेगा। तो राजा ने कहा, अच्छा ठीक है–बताओ क्या युक्ति है। लड़की ने कहा कि सिटी (शहर)के बाहर दूर, एक कमरा बनवाइये। और उसमें मेरा पलंग, गद्दा, तोषक, तकिया सब लगा दिया जाय। और पलंग के दोनों ओर, मिट्टी के दो नांद रख दिये जायं, और उनके मुंह रुमाल से ढके रहें। और एक वैद्य हमें दे दो बस, इतने से काम हो जायेगा। राजा ने वैसा ही सब कर दिया। लड़की थोड़ा होशियार थी। उसने वैद्य से कहा, कि वैद्य जी, एक हमें दस्त की दवा दे दो, कि दस पंद्रह दस्त हो जायं। फिर एक दवा कै करने की भी दे दो। तो ऐसा ही किया। नादों में। और जानते हो जिसको दस पंद्रह दस्त हो जायं, और दस पंद्रह कै हो जायं, उसकी क्या हालत होगी? चेहरा काला पड़ गया। सारा

नूर, जो चमक दमक थी शरीर की, सब खराब हो गई। यह जो टट्टी है–कितनी गंदी चीज है। अच्छे से अच्छे पदार्थ खाए जाते हैं और शरीर के अन्दर जाकर इतनी खराब गंदी चीज़ बनकर निकलते हैं। और उसी में सब क्षमता है। यह मल शरीर में रहता है, तो शरीर में शक्ति रहती है। उसी गन्दी चीज़ में। आयुर्वेद भी कहता है कि मल अगर शरीर में न रहे, तो यह जिन्दा नहीं रह सकता–

'दोष धातु मल मूलं हि शरीरम्।'

तो इस तरह से वह लड़की इस हालत में पड़ गई पलंग पर, और सिपाही से कहा जाओ, मजनू को बुला लाओ। कहना, लैला ने तुम्हें बुलाया है–तुमसे प्रेम करना चाहती है। अब वह पागल हो रहा था, आया बड़े चाव से। और जैसे ही किवाड़ खोला–तो वह लड़की पड़ी थी–बिलकुल चांडाली जैसी लगती थी। जो रूपरेखा चमक–दमक उसमें देखी थी, वह तो थी नहीं। मजनू ने कहा, यह तो लैला है नहीं। पूछा, क्या तुम्हीं लैला हो? लड़की ने कहा– हाँ, हाँ मजनू, आओ–आओ, बैठो। उसने कहा, अरे लैला, तुम्हारा वह हुस्न कहां गया? तो लैला ने कहा–हाँ, वह हुस्न मैनें इस नांद में रख दिया है। मजनू ने झट से रुमाल उठाया। उसमें कै भरी थी–मारे बदबू के हालत खराब हो गई। भागा बाहर को। लैला ने सिपाहियों से कहा, पकड़ो इसको, जाने न पावे। पकड़कर ले आए। लैला ने कहा, अरे, आओ–आओ मजनूं, वह तो मुझे धोखा हो गया। मैंने अपना हुस्न इधर वाली नांद में रखा है, गलती से उधर बता दिया। जैसे ही रुमाल उठाया उसमें टट्टी भरी हुई थी। भागा तौबा–तौबा करके। भूल गया सारा पागलपन। और फिर कहते हैं, उसका ट्रांसफार्म (परिवर्तन) हो गया। तो इस संसार में कुछ है नहीं–सिर्फ चमक–दमक है। तो संसार की बात के पीछे, यह कहानी हमको याद आ गई।

हाँ, तो इस जात–पांत में कुछ रखा नहीं है–

हरि को भजै सो हरि का होय।
जात पांत पूछै ना कोय।।

खूब गहराई से छानबीन कर लो, और ईश्वर के लिए पागल हो जाओ। और ईश्वर के लिए मचल जाओ। तो सब पता लगने लगेगा, और नहीं तो, जैसे कि वह एक अहीर था चरवाहा। सबके जानवर चराता था, और इसी से जो कुछ मिल जाता था, उससे उसका काम चल जाता था। तो एक रोज पशुओं को लेकर जंगल में गया। वहाँ देखा, कि एक महात्मा पूजा–पाठ कर रहे हैं। गया पास में, जाकर प्रणाम किया। जब चलने लगा, तो महात्मा ने उसे एक पत्थर की मूर्ति दे दी–कहा कि, ले

जाओ, रोज़ घर में धूप दीप अक्षत से पूजा किया करना। ले गया–पूजा करता रहा रोज। एक दिन देखा कि एक चूहा, मूर्ति के ऊपर बैठा, जो चावल पूजा में चढ़ाए थे, उन्हें खा रहा था। अहीर ने देख लिया। उसे लगा, अरे, यह तो इस भगवान के ऊपर चढ़कर बैठा है। यह उससे बड़ा भगवान है, इसी की पूजा करना चाहिए। तो चूहा को पूजने लगा। एक दिन देखा कि बिल्ली, चूहे को भगाए है। तो उसने सोचा, यह तो उससे भी बड़ा भगवान है–बड़ी गलती हुई। मुझे इसी की पूजा करनी चाहिए। तो बिल्ली को पूजने लगा। उसी की धूप, दीप आरती करने लगा। एक दिन किसी कुत्ते ने दौड़ाया बिल्ली को। भागी जान बचा कर। अहीर ने देख लिया। तो कहा, अरे! यह तो कुत्ता ही बड़ा है। वह तो इतना ही समझता था, कि जो बड़ा है सबसे, वही भगवान है। कुत्ता को ही पूजने लगा। एक दिन अहीर की औरत ने देख लिया, तो मारा चार डंडा कुत्ता को। भागा क्यां क्यां करके। तो अहीर ने कहा, अरे! बाप रे बाप। बड़ी भूल हो गई यह कुत्ता भगवान नहीं, यह तो मेरी घरवाली ही भगवान है। उसी की पूजा कुछ दिन चली। एक दिन कुछ गलती किया औरतिया ने, तो मारा चार डंडा अहीर ने। तो समझा, अरे! यह तो बड़ी भूल में थे हम–भगवान तो हम ही हैं। तो देखिये, यह तो एक कहानी है। यह तो एक समझाने का माध्यम है। मनुष्य घूमते–घूमते वहाँ आता है, जहाँ उसका ठिकाना है। हाँ कमजोरी है–भरभटाना पड़ेगा। अगर समझ काम नहीं करती, तो इतने देवताओं की उपासना करनी ही पड़ेगी। और अगर कर गयी समझ काम, तो डाइरेक्ट एडमीशन (सीधा प्रवेश) होगा। इस तरीके से ऐसी यह लाइन (रास्ता) है।

इसलिए ईश्वर का रास्ता पकड़ो। ईश्वर की ओर चलो, और फोर्स के साथ चलो। फोर्स का मतलब यह नहीं है, कि तुम फोर्स (फौज) लेकर किसी से झगड़ा करो। फोर्स का मतलब है, कि भजन में तेजी लाओ। नाम में तेजी लाओ। साधना में तेजी लाओ। और नियम से करो। यह नहीं कि नियम टूट जाय। और इसके साथ–साथ, जो सांसारिक विषयों की तरफ मन दौड़ता है, उसको रोको। एक तरफ भजन करना है, और एक तरफ जो माया की तरफ हमारा विचार, हमारा मन दौड़ जाता है, उसे रोकना है। एक मन को दमन करना, मन को ईश्वर में लगाना, बस दो काम हैं। अनेक महापुरुषों ने, इसके तरीके बताए हैं। तो जो जैसा साधक हो, उसको वैसा तरीका ग्रहण कर लेना चाहिए। और उसमें फिर तीव्रता लाना चाहिए। समझकर ठीक से चले, तो मेरे विचार से तो, रद्दी से रद्दी साधक भी प्रगति कर सकता है। अनपढ़ भी कर सकता है, पढ़ा हो वह भी कर सकता है। सुजात हो वह भी कर सकता है, अच्छी जात का न हो, वह भी कर सकता है। सब कर सकते हैं।

ईश्वर के दो रूप होते हैं। एक होता है निरवयव, एक होता है सावयव। निरवयव, निर्गुण, शुद्ध, बुद्ध, अलख, अजन्मा, अविनाशी, एकरस स्वरूप है। सावयव, जो सगुण लीला करता है। जो निर्गुण परमात्मा का स्वरूप है, उसका ट्रांसफार्म होता नहीं। उसकी शक्ति च्युत नहीं होती। नीचे नहीं आती। पंचवटी में सीता के दोनों रूप देख सकते हैं। तो मूल शक्ति वह रही, जो अग्नि में प्रवेश कर गई। और यह लीला बनावटी रहती है। तो भगवान भी टिट फार टैट-जैसे को तैसा बनाकर, बनावटी लीला करता है। काम, क्रोध सब असत्य हैं, संसार असत्य है। तो बनावटी से बनावटी को मारकर सही को ले लिया। यह एक तरीका है। तो एक स्वरूप है निर्गुण, जो सर्वत्र एक सा रहता है, अव्यक्त रहता है। एक सरूप है सगुण, जो लीलाधर है। अपने भक्तों के लिए। तो यह संसार झूठा है, तो ऐसे वह बनावटी सरूप बना-बनाकर, लीला करता है। तो यह जो बनावटी सीता है, उसको लेकर करता है। और वह जो सीता थी-अग्नि में प्रवेश कर गई। वह आह्लादिनी शक्ति है। जानकी। जो निर्गुण ब्रह्म की शक्ति है। वह कभी च्युत नहीं होती। सदैव एकरस रहती है। हमेशा एकरूप में ही रहती है। इस तरह से, गोस्वामी जी ने यह बताया है, कि राम ब्रह्म है। और उसे इस प्रसंग से सिद्ध कर दिया है। और हायर लेबल में, जैसे विष्णु का अवतार है। यह एकांगी अवतार है। और उसमें सब हो सकता है। शक्ति का अपहरण हो सकता है-परेशानी आ सकती हैं, और भी बातें आ सकती हैं। अब जैसे भूत खड़ा हो जाय, तो यह रायफल काम नहीं करेगी। या फिर साक्षात् डाकू आ जाय, तो भूत वाले मंत्र-तंत्र काम नहीं करेंगे। तो जैसे को तैसा होना चाहिये। अगर भूत मिल जाय तो मंत्र-तंत्र से काम लेना होगा। इस तरीके से जो बाहरी लीला है, उसमें झूठी ताकत को बढ़ाकर परमात्मा अपनी जगह स्थित है। इसीलिए कहा जाता है, कि परमात्मा कुछ नहीं करता है। परमात्मा न कुछ करता है, न बोलता है, न बताता है, न चलता है न फिरता है। एक रस है।

'न ध्यानं न ज्ञानं न जोगं न भोगं।

चिदानन्द रूपं शिवोहम् शिवोहम्।'

बस एकरस है। और नहीं ऐसे तो, परमात्मा के अनेक रूप हैं। हम पहले कह चुके हैं, कि स्थूल का अलग है, सूक्ष्म का अलग है, कारण का अलग है। ये लक्ष्मी वगैरह उसी परमात्मा की शक्तियाँ है,जो अलग-अलग अपनी-अपनी जगह काम करती हैं। लेकिन वो मायिक क्षेत्र की बातें हैं। ये ईश्वरीय क्षेत्र की बातें हैं। मायिक क्षेत्र में कभी ईश्वर नहीं जाता। और न माया, ईश्वरीय क्षेत्र में प्रवेश करती है। और

ईश्वर, माया में ओत-प्रोत है। और माया, ईश्वर क्षेत्र में ओत-प्रोत है। यह भी एक ढंग से ठीक है। और न माया है, न ईश्वर है यह भी ठीक है। और माया भी है ईश्वर भी है, यह भी ठीक है। जो अनिर्वचनीय होता है, उसमें तुम जो भी सिद्ध करो, वह सिद्ध हो जाता है। इसलिए पंचवटी का जो प्रकरण है, वह शुद्ध परब्रह्म राम की जो शक्ति है, उसको बताने के लिए लिखा गया है। बड़े व्यास परेशान हैं। अनेकों अर्थ करते हैं। लेकिन इस निश्चय पर नहीं पहुंच पाते, कि हम यह सही कर रहे हैं, या नहीं। तो यह अनिश्चितता, समाज के हर आदमी में बनी हुयी है। कोई ऐसा आदमी नहीं है, जिसको निश्चितता आ गई हो। क्यों अनिश्चितता बनी हुयी है? इसलिए कि लिखने वालों ने इन कथाओं में अपने आन्तरिक अनुभतियों को बाहर समाज की शैली में ढालकर लिखा है। पदुम अठारह यूथप बंदर। अठारह पदुम बटालियन। एक बटालियन के लिए सौ डेढ़ सौ किलोमीटर, लम्बी सौ सवा सौ किलोमीटर चौड़ी जगहहोनी चाहिए। (लंका में) वहाँ इतनी बडी संख्या में कैसे आ पाएंगे? तो यह बात ठीक नहीं लगती। रामचरितमानस में ऐसी बातें भरी पडी हैं जिनका समाधान लोग खोजते ही नहीं। नहीं खोज पाते,इसलिए अनिश्चिय में बने रहते हैं-कहने वाले भी,सुनने वाले भी विचार करते नहीं-भावना के स्तर पर लेते हैं। निश्चितता आ नहीं पाती। इसलिये, कि यह सब जहां बैठाया जाना चाहिये, उसे तो लोग समझते नहीं। कहने वाला जो था-वह तो अंतर्जगत का भ्रमण करने वाला था। वाह्य जगत का आदमी था नहीं। और हम लोग उठाकर ले गए उसे दूसरे जगत में। यह बात है दूसरे जगत की। उसके मापदण्ड दूसरे होते हैं। और हमारे (वाह्य जगत के) मापदण्ड हमारे अपने हैं। हमने तुमसे बताया, कि अगर अंतर्जगत में तुम्हारा एक पैसा कर्जा माया का बकाया है, तो समझो बाहर जगत में एक लाख रुपया हो गया। मुद्रा में कितना अंतर हो गया। तो इस तरह यह अंदर वाला समाज दूसरे ढंग से चलता है। राक्षसों को किसी ने देखा तो है नहीं। रावण कैसा था, कुंभकर्ण कैसा था, मेघनाद कैसा था? देवता कैसे थे? इन्द्र कैसा था? वरुण कैसा था? ये सब कल्पना से बनाए गए हैं। जिसने देखा, उसने कहा नहीं, और जिसने देखा नहीं, उसने कहा। तो तालमेल नहीं बैठता। इसलिए-

"यानिशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।"

जिसमें यह संसार सोता है, उसमें संयमी जागता है। जैसा हम देखते हैं, यह ऐसा है नहीं। जैसा हम देखते हैं, वैसा विचारकाल में नहीं है, यह संसार। विचारकाल में यह दूसरे ढंग का है। तो फिर या तो हम बदलें, तो उसको प्राप्त करें। या तो वह बदले, तो हमको प्राप्त हो। इस तरीके से इसमें बहुत अन्तर है। तो जो समाज

है राक्षसों की, और बंदरों की या दानवों की और देवों की, वह संकल्पों में उठती है। जानते हो–एक संकल्प में,एक इच्छा में, कितने चिंतवन आते हैं। इच्छा ट्रेन है। इड़ा और पिंगला ये पटरी हैं। संकल्प–विकल्प डिब्बे हैं, और चिंतवन यात्री बैठे हैं–उसमें। और हृदय प्लेटफार्म है। उसमें इन यात्रियों की भीड़ उतरती है। क्षण–क्षण में, सैकडों संकल्प–विकल्प आते–जाते रहते हैं–अब सोचो कि एक घंटे में करोड़ों चिंतवन, इनके माध्यम से, आते–जाते रहते हैं। कितनी बड़ी संख्या होगी? काम के संकल्प, क्रोध के संकल्प, लोभ के संकल्प, मोह के संकल्प, भगवान के संकल्प, अच्छे संकल्प। ये तो, पदुम अठारह क्या? और भी ज़्यादा संख्या हो सकती है। गोस्वामी जी ने अठारह इसलिए कहा, कि आगे एडजस्टिंग करना है। पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, चार वाणियाँ और चार अंतःकरण। ये अठारह होते हैं। इनमें देव और दानव संघर्ष करते रहते हैं। अठारह अध्याय हैं, गीता में। गी–नाम इंद्रियों का, ता, त्याग हो जाय विषयों से, तो गीता समझ में आती है। तो ये अठारह जो तत्व हैं, इनमें एक एक अध्याय–18 अध्याय की ज्ञान गीता सद्गुरु बताते हैं। इसी प्रकार भागवत में 18 हजार श्लोक हैं ऐसे 18 और भी बहुत हैं। ये 18 तत्व हैं। जहाँ श्वासा है–वह स्वर्ग है। इस स्वर्ग की रक्षा कहां होती है– शरीर में, जहाँ श्वासा चलती है। इस स्वर्ग के लिए देव और दानवों में संघर्ष चलता है। इस तरीके से, अध्यात्म में अगर चलना है, तो इसे लाना ही पड़ेगा। और अगर नहीं लाओगे तो एडजस्टिंग सही नहीं आती। सही नट–बोल्ट नहीं बैठते, जैसा होना चाहिए।

अब यह तो स्वाभाविक बात है कि, जो दुनिया में रहते हैं, दुनिया की तरह देखते हैं–इसमें तुम्हारा दोष नहीं है, कि भाई यह नहीं देखना चाहिए। देखना ही पड़ेगा। हां सही समाधान के लिए मानस कोमानस में ही लेना पड़ेगा। ये राक्षस, ये देवता, बंदर भालू सब अन्तःकरण के अच्छे बुरे संकल्पों की समाज है। लेकिन बहिर्मुख दुनिया में जो रुढ़ि बन गई, वह जल्दी जा नहीं सकती। समाज से नहीं जा सकती। हाँ व्यक्तिगत सुधार हो सकता है।

कोई कहीं पैदा होता है, तो उस गांव का होगा, उस भाषा का होगा, उस जाति का होगा, उस देश का होगा। उस कास्ट का कौन ईश्वर है, क्या सिद्धान्त है, कौन धर्म है–उसे लेकर चलेगा, तो फिर उसको वह बाधित करेगा। उसका विरोधी सिद्धान्त भी होगा। और दुनिया में अनेक भगवान नहीं हैं, भगवान तो एक ही है। अगर ईश्वर को अलग मान लिया जाय, आला ताला को अलग मान लिया जाय, मोहम्मद को अलग मान लिया जाय, राम को अलग मान लिया जाय, तो ये भी एक तरह से जाति–धर्म वालों के साथ होकर अलग–अलग हो गये। जाति–धर्म करके बाधित हो

गया ईश्वर। जबकि ईश्वर अबाधित होता है। इसलिये हम यह कहते हैं, कि अगर थ्योरिटिकल को भी लेना है-प्रैक्टिकल के साथ-साथ, तो हमारी कोशिश यह होनी चाहिए, कि हम किस तरीके से अबाधित हों, सबको समाहित कैसे कर सकें? सबको ओतप्रोत कैसे कर सकें? हम जिस सिद्धान्त को लेकर चलें, वह सबमें ओत-प्रोत हो सके। सब में लागू हो सके, तो वह सिद्धान्त सही माना जायेगा। अगर हम वैष्णव हो जायं, तो फिर शैव कहेगा हमारा सिद्धान्त ठीक है। तो फिर नानक पंथी है, उदासी पन्थी है। कबीर पंथी है। ऋषी है, मुनि है, संप्रदाय तो भरे-पड़े हुये हैं। तुम्हारा सिद्धान्त ऐसा हो, जो सबमें ओत-प्रोत हो सके। इसके लिए अध्यात्म को लेना पड़ेगा। अन्तःकरण के स्तर पर भेदभाव बाहरी ढंग से नहीं है। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार-एक ही अन्तःकरण है। कहीं मन को ही अंतःकरण माना है। कहीं बुद्धि को ही अन्तःकरण कहा गया, और कहीं अकेले अहंकार को भी कहा गया। पूरे अन्तःकरण को मन के रूप में भी दिखाया गया है। सब्जेक्ट के अनुसार जैसी शैली बनती है, वैसे बताया जाता है। परमात्मा जो है वह व्यापक है, एकरस है, स्तम्भवत है और हलन-चलन से रहित है। आकाशवत है। करोड़ों वर्षों पहले जो हुआ था, उसको भी आकाश जानता है क्योंकि तब भी यह ऐसे ही खड़ा था। जब राम हुए, तो उसको भी यह आकाश देखता रहा होगा। सतयुग को भी देखा होगा। कृष्ण ने क्या-क्या किया, वह भी यह आकाश जानता होगा। तब भी रहा होगा। तो ऐसा कोई परमात्मा है, जो आकाशवत कहा जाता है, वह हलन-चलन से रहित है, सदैव एकरस है। उसमें न तो कभी सृष्टि हुई, न कुछ हो रहा है। ऐसा यह उसका स्वरूप है। ऐसा जब तुम्हें बोध हो जाएगा और यह स्वरूप तुम्हें प्राप्त हो जायेगा तब तुम्हारा यह भ्रम दूर हो जायेगा। यह दृढ़ता आनी चाहिए। हम बार-बार बताते हैं, कि लंका और अयोध्या अलग नहीं है। उसी का नाम लंका है, उसी का नाम अयोध्या है। वह साधक के हृदय मे हैं। अब तुम्हारा मन लंका की तरफ जायेगा, फिर अयोध्या की तरफ जायेगा-तो नहीं समझ में आएगा। लंका और अयोध्या एक ही अंतःकरण में है। वहीं राम बैठा है, वहीं रावण बैठा है। उसी में रावण की शक्ति निहित है। ये आकाश में बैठे हैं- आकाश को क्या कहते है? नभ कहते हैं-आकाश को। नाभि कहते हैं। अब वहां से संबंध जुड़ जाय, तो फिर पता लग जाय। तो यह एडजस्टमेंट अपने में होना चाहिए। यह हमारा मन, एक ईश्वर के शरणापन्न हो जाय। समत्व में शरणापन्न हो जाय। प्रकृति की विभिन्नताओं वाला न रह जाय। विभिन्न कारणों वाला न रह जाय, विभिन्न दुनिया वाला न रह जाय, यह एक धारा वाला हो जाय। सब मिलकर एक हो जाय। सब मिलते-मिलते पानी हो जाय। पानी परमात्मा है, और

यह बरफ जो हैयह संसार है। तो ऐसी ज्ञान की गर्मी का जोर लगाओ कि यह संसार रूपी बरफ गल कर, परमात्मा रूपी पानी हो जाय। अब बरफ रहेगा या पानी रहेगा। बरफ तो बनावटी है, और पानी ओरिजनल है–स्वाभाविक है। बरफ को गलाना है। परमात्मा कहीं गया नहीं। बस सिद्धान्त एक है।

गोविन्द पादाचार्य हुये हैं शंकर के गुरु। शंकर का जो दर्शन है–उससे पहले गोविन्द पादाचार्य के गुरु गौड पादाचार्य हुये, उन्होंने लिखा था, अपनी थीसिस में, कि अभी सृष्टि हुई ही नहीं। मतलब यही है, कि यह है ही नहीं। इसे चित्त से हटा कर देखो–यह है ही नहीं। अगर इसको तुम ध्यान से नहीं हटाओगे और यही तुम्हारे ध्यान में बना रहेगा कि यह है, वह है, तो यह नानात्व, तुम्हें एकत्व की ओर नहीं जाने देगा। साधन का एक ही लक्ष्य सबसे प्रमुख है, कि साधन करते–करते साधन में आने वाली जो प्रक्रिया है, उसको हम भुला दें। अगर वो याद बने रहेंगे, तो साधन से मारे गए दुश्मन फिर पैदा हो जाएंगे। यह नियम है। इसलिए बचने के लिए, साधन में आने वाली प्रक्रिया को भुलाना पड़ेगा। अनेक कथानकों के माध्यम से सुना होगा, कि जड़ भरत ऐसे मस्त रहते थे। फलां महात्मा ऐसे रहते थे। उन्हें सब भूल जाता है। थोड़ा कुछ ज्ञान (संसार का) रहता है, लेकिन उतना, आम जनता की तरह, नहीं रह जाता। इस प्रकार का जब मस्ती का नशा आ जायगा, और ईश्वर का नशा छा जायगा, मस्ती का एक तम्बू छा जायेगा। फिर हमारा मन, उस तम्बू के बाहर जा ही नहीं पाता। अब जब भी मन कुछ सोचता है, विचार आते हैं तो उस तम्बू के बाहर जा ही नहीं पाते हैं। अनेक बातें आ सकती हैं–कि प्रचार किया जाय, हमारा नाम हो जायगा, जैसा कि आजकल बाबाओं में देखा जाता है। अब थोडी सी मेहनत कर दी जाय, इसके लिए तो यहाँ टूट पड़ेगी पब्लिक। तमाम तरह का विकास दिखाई देने लगेगा। लेकिन जितना भय गरीबी से या कमजोरी से था, उससे ज़्यादा भय इससे है, इस वैभव से है। तो जब अच्छाई भी बुराई की तरह दिखाई पड़ने लगे। बुराई तो बुराई है ही, जब अच्छाई, बुराई का रूप ले ले, तब तुम समझो कि अब हमारी प्रगति हो रही है।

बेचहिं वेद धरम दुहि लेहीं।

समझो, इससे बड़ी बुराई और क्या हो सकती है? हम तो यहाँ तक कहते हैं कि तुमने पढ़ाई की और डाक्टर हो गए, इंजीनियर हो गए। कोई वकील हो गया तो विद्या निरपेक्ष होना चाहिए। विद्या ईश्वर को दिलाती है। विद्या को बेचना नहीं चाहिए, पैसे में। हम डॉक्टर हो जायं, लेकिन बदले में पैसा लेना ठीक नहीं है–अब कोई कुछ

हमें देता है– अनपेक्ष रूप से तो वह ठीक है। लेकिन आजकल यह धंधा है। और सुनने वाले भी कथा सत्संग में जाएंगे। वहां बैठकर थोड़ी देर रो धो–लेंगे और फिर लौटकर वहीं धंधे करेंगे, जो करते रहे हैं। रात को विषय में रहेंगे। दिन को वही सब बेइमानी चलती रहेगी। तो फिर ऐसे सत्संग से, ऐसे वक्ता के बताने से, क्या मतलब होता है? उससे बड़ा अभिशाप और क्या हो सकता है? तो सत्संग अगर अनधिकारी को बताया जाये– तो ठीक नहीं।

यह न कहिय सठहीं हठ सीलहिं।

अनधिकारी को जो सत्संग बताया जाता है, उसका बुरा इफेक्ट (प्रभाव) उस बताने वाले के ऊपर आता है। वह बरबाद हो जाता है। इसलिये यह अनिवर्चनीय विषय है। अन्तःकरण क्या है, कैसा है, यहहमारे ऋषि–मुनियों, अनुभव करने वाले महात्माओं की कल्पना है। जो पद्धति उन्होंने दिया है, उस पर आज हम सबको चलना है–चाहे गलत हो, चाहे सही हो। हम तो कहते हैं कि तुम भी लिखो। जो उन्होंने लिखा है–वह तुम भी लिखो। तुम्हारी भी अपनी एक थीसिस होनी चाहिए। साधक को, अगर इस रास्ते पर चलना है, तो हर हालत में उसे तुलसी बनना पड़ेगा, हर हालत में उसे सूर बनना पड़ेगा, हर हालत में उसे कबीर बनना पड़ेगा। और अगर ऐसा नहीं बनता, तो मेरे विचार से वह सफलता नहीं पा सकता। यह बहुत मालीक्यूल विषय है, अनिवर्चनीय है, इसलिए सूर कबीर या और जो महापुरुष हुए हैं उन लोगों ने क्या कहा? प्रश्न तो यह है–तो साधक को अगर ज़रूरत पड़ जाय, तो मेरे विचार से उन बातों को सुनना चाहिए। जो स्वतंत्र, संप्रदाय रहित, व्यापक वृत्ति के महापुरुष हुए हैं उनकी बातों को सुनना चाहिए। पढ़ना चाहिए। उनकी वाणी सुनने से साधक को फायदा होता है। और जो संप्रदायी हैं या बाधित हैं, संप्रदाय बाधित हैं – तो उनके विचार सुनने से–बाधा आएगी। साधक रूढ़ि ग्रस्त हो जाएगा।

ईश्वर की तरफ ले जाने के लिये महात्माओं ने रिसर्च किये– हैं, खोज किये हैं। तो उसमें कई तरीके हैं–नाम है, ध्यान है, योग है, यह अलग चलता है। इसकी मदद के लिये शरीर में कई चक्र या कमल हैं, उनको जाग्रत किया जाता है। उसमें दबाव पड़ता है। अन्तःकरण को रोकने के लिये। ये कमल कई जगह होते हैं। मुख्य रूप से ये छः जगह होते हैं। ये ऐसी जगहें हैं, जहाँ से शक्ति वेस्ट होती रहती है–व्यर्थ जाती है। इनको धीरे–धीरे जाग्रत किया जाता है। जब जाग्रत हो जाते हैं, तो जिस जगह जो शक्ति है, वह अपने को मिल जाती है। एक तरीका यह भी है। इस तरह से कई तरीके हैं। साधक का परीक्षण करके देखा जाता है, कि इसको यह

गड़बड़ी है, इसको इस क्रिया की ज़रूरत है। इसके मुताबिक उसे बता दिया जाता है। इस साधक को यह दिक्कत है–इसे इस तरीके से फायदा होगा। इस प्रकार कपाल भाँती है, त्राटक है, नेती है, बस्ती है, धौती है। कई प्रकार के षटकर्म कराये जाते हैं। जैसे ध्यान में मन नहीं लगता तो–क्यों नहीं लगता? कफ बढ़ गया है, या और कोई विकार हैं। तो योग में इसके लिए यह विधान है।

योग चार प्रकार के होते हैं–एक होता है हठ योग, एक होता है लय योग, एक होता है निष्काम कर्मयोग, और एक होता है राज योग। राज योग श्रेष्ठ माना जाता है। इस तरीके से हर साधना की गतिविधि अलग–अलग होती है। किस साधक की कैसी गतिविधि है। किस साधन में किसकी अभिरुचि है, यह देखकर उसके अनुसार वह साधन उसको दिया जाता है। दूसरा क्या है, कि बहुत से लोगों को शरीर में विकार हो जाता है उसको दूर किया जाता है– जैसे किसी का डाइजेशन (पाचन) ठीक नहीं है, तो उसके लिए बस्ती क्रिया है। अगर कफ है, तो धौती की जाती है। नासिका में गड़बड़ी है, तो नेती की जाती है। अगर मस्तक भारी रहता है तो, कपाल भांती की जाती है। फिर कपाल भाँती के बाद मस्तक ठीक हो जाता है तो फिर छठवीं क्रिया त्राटक की जाती है। त्राटक का मतलब है कि किसी एक जगह दृष्टि जमाकर देखते रहना। यही त्राटक है।

बिहार में एक आदमी था। उसे किसी फकीर ने बता दिया, कि तुम सुबह जब सूर्य उदय हो तो उसमें त्राटक किया करो। तो वह सबेरे बैठ जाय और सूर्य जब उदयकाल में मुलायम रहता है, चन्द्रमा जैसे रहता है, उसे वह देखने लगा। उसे बता दिया कि देखते समय आँख की पलक न गिरे–टकटकीलगाकर देखा करो। तो वह रोज देखने लगा–एक मिनट दो मिनट करके बढ़ाते–बढ़ाते, एक–एक घंटे तक त्राटक करने लगा। घंटा, दो–दो घंटा त्राटक करने लगा। तो उसमें इतनी शक्ति आ गयी, कि जिस आदमी को एक बार देख ले, और जैसे वह आदमी नहीं है वहाँ, स्मरण में देखकर चित्त में उसको पकड़ ले तो वह उसके पास आ जाय। ये शक्तियाँ हैं इंद्रियों की। अगर ईश्वर के लिए किया जाय, तो ठीक है। लेकिन कई तरह के लालच हैं–दुनिया के। इसको ऐसा करने से यह चमत्कार आ सकता है। इसकी भी दुनिया बड़ी भारी है। तो ये सब हठ योग की क्रियायें हैं। इनकी ज्यादा जानकारी करने की ज़रूरत नहीं है। हाँ अगर हमारा ध्यान नहीं लगता तो सहायता के रूप में ज़रूरत पड़ने पर इनको करना चाहिए। तो जैसे हमारा शरीर रुग्ण है, कुछ कमी है–उसके लिये ये हठ्योग ईजाद किया गया है। पेट मे भारीपन रहता है–डाइजेशन ठीक नहीं है, तो ध्यान ठीक से नहीं होगा। उसका सिस्टम है इसमें–बस्ती कहते हैं–उसको।

पेशाब करे, छींक करे और दस्त हो जाय तो इसको किया जाय। अच्छा, धौती है–तो अगर श्वासा में भारीपन होता है–हर श्वासा सरल–हलके से जाना चाहिए, पश्यंती में। जब हम अजपा जाप करेंगे, तो सरल से जानी चाहिए–हलकी श्वास चलनी चाहिए। जब रिनिक–धिनिक ध्वनि अपने से हो जाय। यह स्वाभाविक होना चाहिए। और अगर इसमें भारीपन है, तो समझना चाहिए कि फेफड़ों में या श्वासा की नली में, कफ का संचार हुआ है। तो धौती करते हैं। 15–20 हांथ लम्बा कपड़ा होता है–रेशम का, उसको चिकना करके–मुंह से अंदर डालकर साफ कर लेते हैं। तो कफ साफ हो जाता है, इसको धौती कहते हैं। इसे सिखाना पड़ता है। और जब नासिका में गड़बड़ी होती है। स्वर ठीक से नहीं चलते हैं तो नेती करते हैं। नेती में कपड़े की एक लम्बी बत्ती (नेती) बनाकर नाक के एक छेद से डालकर दूसरे से निकालते हैं। नाक में डालकर मुंह से निकालते हैं–और इस तरह सफाई कर लेते हैं। फिर ध्यान में बैठते हैं। ऐसे ही अगर सिर भारी है। सिर में वजन आ गया। तो ध्यान में दिक्कत आती है। तो फिर कपालभांती करते हैं। जल्दी–जल्दी तेजी से श्वास को खींचते–छोड़ते हैं–इसको कपालभांती कहते हैं। नौले, बस्ती, नेती, धौती, कपालभांती और त्राटक ये छः मुख्य हैं। इनको करके, फिर ध्यान करना चाहिए। पुस्तकों में इनको विस्तार से लिखा गया है। लेकिन ये शरीर स्तर की क्रियाएं हैं। अगर इन्हीं को योग मान लिया गया तो गलत हो जायगा। योग तो सूक्ष्म स्तर की चीज है। चित्त के निरोध को योग कहते हैं। योगश्चित्तवृत्ति निरोधः। महर्षि पतंजलि कहते हैं – योग का मतलब चित्त की गति को रोकने से है। तो यह सूक्ष्म स्तर की साधना है। और ये त्राटक वगैरह बाहरी बातें हैं।

अच्छा अब चक्र समझो। मूलाधर एक चक्र होता है–यह गुदा चक्र है। यह मूलाधार दो दल का होता है। दूसरा स्वाधिष्टान यह चक्र जननेन्द्रिय के ऊपर होता है यह चार दल का होता है। मणिपूर चक्र नाभि को कहते हैं, यह छः दल का होता है। अनाहत चक्र हृदय को कहते हैं–जहां हार्टबीटिंग करता है–यह आठ दल का होता है। कंठकूप कंठ में है। इसमें मछली के आकार की एक नाड़ी होती है कूर्मनाड़ी, जिसमें पूर्व संकल्प इकट्ठे रहते हैं। जो समय आने पर उद्भूत हो जाते हैं। ये कंठकूप भी दो दल का होता है। इसे विशुद्ध चक्र भी कहते हैं। और फिर मूर्धा है। यह एक दल का होता है। यह मूल जगह है। इस तरह से ये छः होते हैं। इस विषय में भी विभिन्न मत हैं। तो इनमें ये कमल–दल होते नहीं है। अगर चीर–फाड़कर देखा जाय, तो वहाँ कमल नहीं हैं। यह ऐसा कल्पना से बना लिया गया है। और बना इसलिए लिया गया है, कि इससे लाभ लिया जाता है। लाभ इस तरह से, कि यह संसार

और यहमन यह सब झूठी चीज़ है। यह है नहीं–अगर है तो सिर्फ ईश्वर। जो सब में है। पहले भी था आज भी है, आगे भी रहेगा। काल करके भेद नहीं है उसमें। सदैव एक रस है। और जो यह भेद (संसारगत) दिखायी पड़ता है, यह उसकी गैर हाजिरी का दुष्परिणाम है। ईश्वर को न देख पाने से है। उसको न देखने से, यह दिखाई पड़ने लगता है। इसी बीमारी को दूर करने के लिए, साधना की जाती है।

होता क्या है, कि साधना करते–करते साधक के मन की गति जब रुक नहीं पाती। सही एडजस्टिंग हो नहीं पाती। तो उसमें कुछ और ताकत की ज़रूरत पड़ती है। गुरु लोग जब समझते हैं कि ऐसी ज़रूरत है, तो फिर वो, इन कमलों को जाग्रत कराते हैं। श्वासा की साधना कराते हैं। जो हम, तुम लोगों को बताते हैं। चौबीस घंटे में 21608 श्वासा चलती है। और यह कुछ कहती है। ऊपर जाती है तो कुछ कहती है, नीचे जाती है तो कुछ कहती है। यह क्या कहती है–ओ–म, ओम, राम, रा, म, सो, हम्, सो–हम्। जिसको जो शब्द अनुकूल पड़ जाय, उसको वह कर सकता है। तो इस तरीके से, मन को खड़ा कर देना चाहिए और श्वासा में नाम को सुने।

मूलाधार से चलती है श्वासा। वहां से फिर नाभि–कमल को टकराती है–मणिपुर को। फिर वहां से अनाहत को टकराती है, फिर कंठकूप को टकाराती है–इस तरह सबको धक्का लगाती रहती है। ये सब कमल अधोन्मुख रहते हैं। ये जो हार्मोंस हैं शरीर में, आध्यात्मिक योग्यता पैदा करने वाले। ये जो कमल हैं, अधोगति वाले, वो सब श्वासा से टकराते–टकराते ऊर्ध्वमुख हो जाते हैं। खिल जाते हैं। और जब ये खिल जाते हैं, तो इन चक्रों में जो–जो ताकत निहित है, वह सब अपने को मिल जायेगी।

नाभि कमल में, मणिपूर चक्र में, लक्ष्मी और विष्णु का निवास है। इसी को कुंडलिनी भी कहते हैं। यह सर्पिणी के रूप में दिखाई जाती है। फोटुओं (चित्रों) में तुमने देखा होगा सर्प की कुंडली में विष्णु को सुला देते हैं, और लक्ष्मी उनके पैर दबाती रहती हैं– वह नाभि कमल का चिन्ह है। महापुरुष की नाभि कमल का स्वरूप है। नाभिकमल में विष्णु रहते हैं–सबसे बारीक तत्व है, विष्णु। नाभि कहते हैं, नभ को, आकाश को। पृथ्वी सबसे बड़ा और मोटा तत्व है। उससे भी बारीक और बड़ा तत्व है, जल। उससे बारीक और बड़ा तत्व अग्नि है। उससे भी बारीक और बड़ा वायु है–गैस तत्व है, उससे हजारों गुना बारीक और बड़ा तत्व आकाश है। और उससे भी कई गुना बारीक और बड़ा महत्तत्व। और उससे भी बारीक और बड़ा तत्व

है–मूल प्रकृति। और प्रकृति से हजारों गुना बारीक और बड़ा तत्व आत्मा है–आठवां तत्व। उस तत्व में हमें पहुंचना है। उसका रंग, हमारे ऊपर चढ़ जाय। माया का रंग हट जाय। जब उससे हमारा संबंध बन जायगा। उससे हम कनेक्ट हो जायेंगे। तब हम, वह हो जायेंगे। और जब वह हो जाएंगे। तब हम, यह नहीं रह जायेंगे। या तो बर्फ रहेगा या तो पानी रहेगा। दोनों तो रह नहीं सकते। जब ज़्यादा ठंड रहेगी तो बर्फ जम जायेगी–पूरा हिमालय सफेद हो जायेगा। और जब बर्फ को हमने गला दिया, तो पानी हो गया। तो इस तरह से जब हो जायेगा, तब अपने स्वरूप में आ जायेगा।

तो श्वासा में नाम जपते–जपते कुंडलिनी जाग्रत हो जायेगी, और लक्ष्मी–विष्णु का निवास हो जायेगा। उसकी क्षमता अपने में आ जायेगी और उसका असर पड़ने लगेगा–हर चीज़ में। और आगे बढ़ते हैं, तो फिर शिव और पार्वती मिल जाते हैं–हिमालय में। कैलाश में। काया रूपी कैलाश में–हृदय रूपी हिमालय में। सबसे महत्वपूर्ण–हृदय में, शिव और पार्वती मिल जाते हैं। जो कंठकूप है यहाँ ब्रह्मा औरसरस्वती का निवास है। इन तीनों में जो साम्यावस्था है–वह सेंट्रल गवर्नमेंट है। वह आत्मा का स्थान है। वह सुप्रीम है–सबसे सुप्रीम है। वह तत्व कभी विनाश को प्राप्त नहीं होता। अविचल है। एकरस है, व्यापक है, शुद्ध है। इस तरीके से, इन चक्रों की जागृति होनी चाहिए। जब ये जाग्रत हो जाते हैं, तो अजपा एडजस्ट हो जाता है। ध्यान भी होने लगता है। और फिर परफेक्ट (निष्णात) भी होने लगते हैं। कम्यूनिकेशन भी होने लगते हैं, परिपक्वता आने लगती है। निरवयवता आने लगती है, और हर प्रकार के अच्छे लक्षण आने लगते हैं। जप को करते रहना चाहिए। यह मेडिटेशन में सहयोगी होता है। ये दोनों ज़रूरी हैं। नाम और रूप।

नाम रूप दुइ ईश उपाधी।

ये ईश्वर को, यदि कहीं फंसा हो–उसे खींच सकते हैं। वैसे उपाधि–टाइटल है। लेकिन उसको परेशान करने के लिए यह उपाधी हैं–उसको खींच सकते हैं–पकड़ सकते हैं। इसलिए, इनको पकड़े रहना साधक के लिए सर्वोपरि काम है। यह शैली है। लेकिन बहुत से लोग इसको नहीं मानते, वेदान्त को लेकर चलते हैं। कहते हैं, यह तो वैचारिक चीज़ है। जो चीज़ है ही नहीं, उसके लिये क्या करना है? वेदान्त कहता है, कि तुम शुद्ध हो, व्यापक, हो, एकरस हो। तो यह वेदान्त उनके लिये है, कि जो साधना करके पहुंच जायं आखिरी में। उनके लिए यह लागू होता है। हम ऐसा मानते हैं। वेदान्त में एक ही चीज़ है, अलग–अलग नहीं है। ऐसे ही हजारों तरीके बने

हैं–हजारों तरीके ईजाद हो गये हैं। जब से मानव रहा इस दुनिया में, तो यह खुराफात करते–करते दंद–फंद कर लिया है। और एक जाल रोप दिया है। अपने ही के लिए, कांटे बो दिये हैं। जितना तर्क–वितर्क करें, उतनी फांसी लगती चली जा रही है। और क्लिष्ट बनता जा रहा है–विषय।

साधना तो पर्सनल विषय है– यह सबके लिये नहीं है। अनधिकारी के लिये नहीं है। लेकिन आजकल इस कलियुग में, यह भी आवश्यकता की चीज़ मान ली गई है। कि भाई, सब कोई कर सकता है। अब कहना तो सरल है, पर करना बहुत दुर्लभ है। जो तीव्र वेग वाला साधक है–जिसमें स्पीड है, जिसमें वेग है। वह साधक इन सबको सफलीभूत करता है। उड़ान भरता है। और जिसमें उड़ान भरने की ताकत नहीं है, हल्कापन नहीं है, त्याग नहीं है, तीव्रतर वैराग्य नहीं है, वह साधक इसका अधिकारी नहीं बन सकता। जैसे शुरू से ही जो लड़के स्कूल जाते हैं, उनमें से कोई–कोई काफी होशियार होते हैं। वे छात्र मास्टर के प्रिय बन जाते हैं। तो उन्हीं का नाम आता रहेगा। तो उसको एक हवा हो जायेगी। जो मास्टर बताएगा पकड़ता जायेगा–निकलता जायेगा, वह टाप में जायेगा। और जो लद्दर है, उसकी स्पीड धीमी है। सोचने की धीमी है, याद करने की धीमी है। समझने की धीमी है, हर चीज़ की धीमी है। तो धीमी वाले के सामने, बलात् मल–विक्षेप आ जाते हैं। इसलिए धीमी है। नहीं तो, जो मीटर–एंटीना उसके लगा है ब्रेन में, वही तो तीव्र वाले के भी लगा है। लेकिन वह उनको धीमी गति से चलाता है, और वह तेज गति से अपने इन उपकरणों से काम लेता है। तो धीमी वाले के सामने बलात् विघ्न आ जाते हैं, तेज वाला विघ्नों को काटकर झट निकल जाता है। ऐसे जो तीव्र गति वाला साधक होगा, उसके लिए यह साधना सरल पड़ती है। और जो धीमी गति वाला है उसे सरल नहीं पड़ती। इसलिए इसमें चाल बताई गई हैं। साधक कई किस्म के होते हैं–एक पिपीलिका चाल वाला होता है। एक साधकहै जो–पिपीलिका चाल वाला–चींटी की तरह चलता है। अब चींटी को एक किलोमीटर चलने में बहुत समय लगता है। तो ऐसा साधक बहुत धीमी गति से आगे बढ़ता है। ऐसी उसकी समझ है, ऐसी उसकी साधना है। ऐसा ही उसका सब कुछ है। और एक है, पशु चाल वाला। वह थोड़ा उससे तेज है। और एक है, विहंग चाल वाला। जैसे चिड़िया इस डाल से, उस डाल में पहुंच गई। यह तीव्र गति वाला साधक है। उससे भी बढ़कर, मुनमुनिया चाल वाला–मन की गति वाला। जिसके अनेक जन्मों के तपस्या के संस्कार होते हैं, और किसी कारणवश पतित होकर जन्म ही पूर्णता प्राप्त करने के लिए होता है। ऐसे कोई–कोई भाग्यशाली पुýष होते हैं, कि जन्म लिया और सारी योग की प्रक्रिया अपने से आ

जाती है। पूर्व जन्मों के संस्कार वश। उसका जो उल्लास था, उस जनम का, और जो बाधा आ गयी थी, जन्म लेने के कष्ट में ही वह कट जाती है, और पैदा होने के साथ ही, वह योगी बन जाता है। फिर वह तत्काल अपनी योग्यताओं के द्वारा परिणाम को प्राप्त कर लेता है। मन की चाल से उसको सब चीज़ मिल जाती है– इतनी तेज़ स्पीड होती है। इसलिए साधक को अपनी गति सुधारना चाहिए। अगर गति नहीं सुधारता, तो साधना नहीं सुधरेगी। अगर गति तीव्र करता जायेगा, तो बढ़ जायगा।

तो अब यह समझो कि योग कितने होते हैं। एक हठ्योग है–जिसमें डॉक्टरी के सिस्टम हैं। जो साधक को क्या परेशानी है, उसे दूर करने की क्रियायें बताता है। और एक लय योग है। लय योग यह है, कि हमें ईश्वर के प्रति लगन को बढ़ाना है। लगन तेज करना है। बार–बार उसी में जोर देना है। और एक निष्काम कर्मयोग है। यह एक और तरीका है। इसमें है कि हम कामना का त्याग कर दें। काम हम सब करें, लेकिन परिणाम की अपेक्षा न करें। कर्तव्य हम सब करेंगे, लेकिन परिणाम नहीं चाहते हैं–हम निष्काम भावना से करेंगे। हम झाड़ू लगाते हैं, लेकिन झाड़ू के बदले कुछ चाहते नहीं। हम भजन करते हैं, लेकिन भजन के बदले भगवान से कुछ चाहते नहीं। हम न खाना चाहते हैं, न पीना चाहते हैं। कुछ भी नहीं चाहते यह निष्काम योग है। इसमें जो कुछ भी किया जाता है, तुम्हारी भक्ति में शामिल हो जाता है। और जो तुम सकाम करोगे। सकाम ध्यान करोगे। सकाम भजन करोगे तो वह माया बन जायेगी। क्योंकि इच्छाएं तो तुम्हारी बन्द नहीं हैं– लीकेज तो तुम्हारा चल रहा है, तो पुण्य रूपी पूंजी इकट्ठी नहीं होगी। इसलिए इसका वीटो नहीं बनेगा। तो दो चीज़ है दुनिया में–एक प्रवृत्ति मार्ग, दूसरा निवृत्ति मार्ग। प्रवृत्ति मार्ग वह है, जिसमें भजन करके खूब ऐश्वर्य कमाया, तपस्या करके वैभव कमाए, बड़े हो गए और मरे तो फिर नरक में चले गये। उसका भोग करने। फिर तपस्या किये, फिर कमाए, फिर भोग किये, फिर नरक में गए। तो यह सर्कुलेशन में आ गया–संसार में आ गया। यह प्रवृत्ति मार्ग है। और निवृत्ति मार्ग वह है, कि हम सब कुछ करें, और चाहें कुछ नहीं। हम परिणाम नहीं चाहते। हम निष्काम करना चाहते हैं। तो निष्काम भाव से की गई सेवा, भक्ति में शामिल हो जाती है। निष्काम भाव से की गई सेवा, यह निवृत्ति मार्ग है। फिर तुम्हें परिणाम मिल जायेगा। जब तुम्हारी कोई इच्छा नहीं है। तो जब किसी प्रकार की कामना नहीं होती, तो वह भगवान के पक्ष में चला जाता है–वह निवृत्ति मार्ग में होता है। उसका कल्याण हो जाता है। ईश्वर की प्राप्ति होती है।

अब राजयोग क्या है। राजयोग सब योगों का राजा है। उसमें हर कुंडलिनी को जगाना पड़ता है, और शुरू से हर प्रक्रिया को चलाना पड़ता है। उसमें चारों योगों का सहारा रहता है। राजयोग वालायोगी ही, सबसे श्रेष्ठ कहलाता है। उसके पास सब एक्सपीरिएंसेज़ होते हैं। अनुभूतियां होती हैं। इसके पास अनुभव होते हैं। हाँ, राजयोगी जो है–अनुशासन कर लिया जिसने योग के ऊपर, उसको यह पद प्राप्त होता है। सब नहीं पाते हैं। महात्मा तो अनेक होते हैं–लेकिन वे सब ये बातें नहीं जानते। ये सब मामले क्या हैं, कि– साधना करके चढ़ता चला गया। सीढ़ी बाई सीढ़ी चढ़ता चला गया। एक तरीका। एक आंख बंद करके सीधे चढ़ाई के ऊपर पहुँचा दिया, दूसरा तरीका। एक तरीका है कि एक नीति को पकड़ लिया और उसी में रह गए, बस कोई मतलब नहीं। तीसरा तरीका। ये उपासनाकाण्ड, ज्ञानकाण्ड, कर्मकाण्ड। ऐसे कई हैं, एक ज्ञानी होते हैं, एक कर्मकाण्डी होते हैं, एक भगत होते हैं। और एक योगी होते हैं। ऐसे ये चार होते हैं। इनमें योगी श्रेष्ठ माना जाता है। गीता में कृष्ण कहतें हैं–

"तपस्विभ्योऽधिको योगी, ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्मात् योगी भवार्जुन।।"

तपस्वी से योगी अधिक है, ज्ञानियों से योगी अधिक है, कर्मकांडियों से योगी अधिक है–'तस्मात् योगी भवार्जुन'– इसलिए अर्जुन तुम योगी बनो। ज्ञानी तो वेदान्ती हो गया, तपस्वी तपस्या करने वाला हो गया, कर्मकांडी ये आचार्य कर्मकाण्ड करने वाले–इन तीनों से श्रेष्ठ है, योगी। योगी वह होता हे, जो तीनों कालों की बातें जानने में योग्य हो। ईश्वर की अनुभूतियों को प्राप्त करे। उसके पास एक्सपीरियंस होना चाहिए। और ये ज्ञानी और तपसी इसको मानते नहीं हैं। इसलिए ऐसा जो योगी है, जिसके पास अनुभूतियाँ होती हैं वह त्रिकालदर्शी होता है। इसलिए वह सबसे ऊँचा माना जाता है–यह कृष्ण का सिद्धान्त है। इसलिए भाई, साधना करना सबसे श्रेष्ठ है। सम्यक रूप से साधना करने वाला ही योगी है।

'तुम त्रिकालदर्शी मुनि नाथा।
विश्व बदर जिमि तुम्हरे हाथा।।'

भगवान श्रीराम जब बाल्मीकि मुनि के पास गए तो कहा कि हे मुनिवर! आप सृष्टि को–जैसे हाथ में बेर को रखकर देखा जाता है–ऐसे देख रहे हैं। आप त्रिकालदर्शी हैं, तीनों कालों को जानते हैं। यह टाइटल उनको दिया गया। राम जब पैदा नहीं हुए थे, तभी राम की कथा बनाई थी, बाल्मीकि ने–रामायण में। कि तुम्हें

इसे ऐसे करना है। तो इसलिये जो योगी होता है, वह राजयोग का है। उसमें दो प्रकार के योगी होते हैं–एक होता है युक्तयोगी। और एक होता है–अनजान योगी। अनजान योगी जो होता है, वह जब पता लगायेगा, तो उसे पता लग जायेगा कि फ्यूचर में ऐसी घटना होने वाली है। और युक्त योगी जो है, उसको वही शब्द निकलेगा जो उसे कम्यूनिकेशन से मिलेगा। तो पहले युक्त योगी के लेबल पर जायेगा। फिर वह अनजान योगी होगा। और ये दो धाराएं मिलकर एक हो जायेंगी, तब वह राजयोगी कहलाएगा। ऐसे ये शाखाएं चलती हैं। इस प्रकार इसमें तीन, प्रकार के महात्मा होते हैं–एक शून्यत्व वाले, एक भावत्व वाले, और एक पूर्णत्व वाले। पूर्णत्व वाला जो होता है, वही लास्ट वाला होता है। शून्यत्व और भावत्व पहले उठ जाते हैं। इस प्रकार इसमें कई तरह की व्याख्यायें हैं। ये टाइटल हैं। डिग्रियां हैं। जो पहुंच वाले महात्माओं को मालूम हो जाती हैं। उनके अन्दर इनकी लेबलिंग होतीरहती है। कहां है, कितने हैं, क्या है, क्या है। अब आजकल दो तीन ही महात्मा हैं, बस और कोई नहीं ऐसा मिलता है। कहीं आत्मा की कोई क्षति हुई है, तो पता हो जायेगा। कहाँ, कैसे आत्मा एडजस्ट हुई है, उसका मिलन हुआ है। ऐसे–ऐसे अन्तर्जगत में ये कम्यूनिकेशन होते रहते हैं।

यह कहने की चीज़ नहीं है। इसके लिये सबसे बड़ी चीज़ है– श्वासा। यम, नियम, त्याग, मौन, देश, काल, आसन, मूलबंध, देह की समता, नेत्रों की स्थिति, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। ये पंद्रह अंग होते हैं। इनको सांगोपांग ढंग से साधक को लेना चाहिए। यम कितने होते हैं। नियम कितने होते हैं। त्याग क्या है। मौन क्या है। इनकी परिभाषा होती है। योग की पुस्तकें देखने से इनका पता चल सकता है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण है– मूलबंध। यम, नियम, त्याग, मौन, देश, काल, आसन। इनके बाद आता है– मूलबंध। मूलबंध स्वासा को कहते हैं। इसको ही पकड़ना है। इसमें अगर मन रम गया, तो यह मन धीरे–धीरे खड़ा हो जायेगा। मन जहाँ खड़ा हुआ, तो फिर पूरा काम हो जायेगा। मन रिकार्ड है–पूर्व का बनाया हुआ। जो रिकार्ड है अन्तर्जगत का वह सब जलकर भस्म हो जाएगा। मन को खड़ा होना चाहिए। तो इसके लिए श्वासा का जाप, सबसे सरल तरीका बताया गया है। चार वाणी हैं–बैखरी, मध्यमा, पश्यंती, परा। इन्हीं के अनुसार जाप होना चाहिए। ऐसे ही नाम आदि साधन भी चार होते हैं– नाम, रूप, लीला, धाम। और चार ही इनके परिणाम होते हैं– अर्थ, धर्म काम, मोक्ष। और फिर चार ये जो काल, कर्म, स्वभाव, गुन हैं, इनसे मुक्ति मिल जाती है। यही बंध हैं।

'फिरइ सदा माया कर प्रेरा।

काल कर्म स्वभाव गुन घेरा।।'

और भगवान हैं काल कर्म सुभाव गुन भक्षक। और जन रक्षक। इस तरह से भगवान इनके अपोजिट (विपरीत) होते हैं।

'गुण सुभाव त्यागे बिना दुर्लभ परमानन्द।'

बगैर गुन-सुभाव को त्यागे परमानन्द नहीं मिलता। इसको समझे, खूब विचार करके और उस हिसाब से इसमें लगे। तो महत्वपूर्ण मूलबंध है, और मूलबंध के सहारे ही यह सब साधना चलती है। इसको पाकर, योगी परम प्रसन्न हो जाता है। और सरलता हो जाती है। दिक्कतें उसकी, दूर हो जाती है। जब सही एडजस्टिंग उसमें आ गयी, तो मन उसमें खड़ा रहता है, और पता किसी को नहीं चलता। और जब हम बाहर साधना करते हैं- स्वाध्याय करते हैं। बाहरी ढंग लेकर जाप करते हैं, और साधनाएं करते हैं, तो उसमें दूसरों की नज़र आती है। और जब हमको देखेगा, तो देखने वाला कुछ न कुछ हमसे बंटा लेगा। इसलिए श्वासा ऐसा प्रसुप्त (गुप्त) साधन है। कि इसमें अगर हम लगे रहें, तो कोई समझ नहीं सकता। जो देखेगा, ले नहीं सकता। वह समझ नहीं सकता। हर प्रकार से, यह शुद्ध है। इसमें सरलता है। और यह काफी मुफीद पड़ती है। इस साधना को ज़्यादातर महापुरुष अपनाते हैं, और अपने गंतव्य स्थान को, अपने लक्ष्य को, प्राप्त कर लेते हैं। इसी को करना चाहिए, तो साधना बढ़ सकती है। अब बढ़ने की बात है। तो हम अक्सर कहते हैं, कि जितना तीव्रता से चले। अब जैसे ध्यान में एक दिन बैठे दो दिन बैठे और तीसरे दिन कमर पिराने लगी, तो सोचे कि थोड़ा आराम कर लें, गड़बड़ा गये।यही कमजोरी है। तीव्र वाले जो होते हैं, वो कभी गड़बड़ी नहीं करते। नियम से समय पर बैठ जायेंगे और करेंगे। जितना ज़्यादा करेंगे, उसमें और बारीकी आएगी।

अब जैसे हमने अपने गुरु का चित्र ले लिया, ध्यान में। सिर ठीक नहीं। ऊपर भौंह गड़बड़ हो रही है। मुंह ठीक नहीं आ रहा है। फिर गर्दन ऐसी है। ऐसे-ऐसे पूरा देखता जाय। अगर सही नहीं आया, तो संतोष नहीं होना चाहिए। विनय करना चाहिए-हे भगवान! हमारा ध्यान सही क्यों नहीं आ रहा है? बार-बार करें। हे भगवान! मेरे पास कोई शक्ति नहीं है। मेरे पास जो कुछ है-मैं हूँ, मेरा मन है, अन्तःकरण है। वह सब चरणों में बार-बार समर्पित करके, जब अपने को संतोष हो जाय, तब फिर मानना चाहिए कि आज हमारा भजन ठीक से हुआ।

तो इस तरीके से, जब लगन हो जाती है, तो ऐसे ही होता है। फिर ऐसे नहीं होता है, कि नहीं हुआ तो नहीं हुआ-क्यों नहीं हुआ? हमारी अपनी कमी है। क्यों

नहीं झुंझलाते? क्यों नहीं तीव्र अनुराग से युक्त हो जाते? क्यों नहीं हमसे हो रहा है? हममें कौन कमी है? भगवान, क्या मैं इतना गिरा हुआ हूँ, कि आप मुझे उठा नहीं सकते। यह सब अनुराग-भाव अपने गुरू के प्रति, इष्ट के प्रति, होना चाहिए। रोना चाहिए, घबड़ाना चाहिए, लड़खड़ाना चाहिए। तब फिर वो परमात्मा दयालु होते हैं- उठा लेते हैं। सम्भाल लेंगे, एडजस्टिंग दे देंगे। तो वह तरीका, इस प्रकार से है। जब साधक ऐसा करेगा, तब फिर साधक को बल मिल जाता है, क्षमता आ जाती है। उसके हृदय में नम्रता आ जाती है, और वह अपने गंतव्य स्थान की ओर चलने लग जाता है। और जो ऐसा नहीं करते हैं-दस नाम लिये और फिर छोड़कर चल दिये। थोड़ा मन लगा फिर मन ही नहीं लगता, तो कोई और कमी है। जैसे कभी-कभी मन इसलिए भी नहीं लगता कि ये इड़ा पिंगला (स्वर) गलत चल रहा हो, तो भी नहीं लगता। रात को सूर्य नाड़ी और दिन में चंद्र नाड़ी चलना चाहिए। यह जानकारी होना चाहिए। अब तुम रात को ध्यान में बैठे, और बायां स्वर चल रहा है, तो मन नहीं लगेगा। इस तरह से बहुत सी बातें हैं, जो समझ लेना चाहिए तब उसकी धारा ठीक हो जाती है। समझ करके अभ्यास करें, तो कितना भी कमजोर होगा, वह निकल सकता है। भगवान के यहाँ तो सब तरह के भर्ती होते हैं। निम्न श्रेणी का भी होगा-अच्छी श्रेणी का भी भर्ती होगा। भजन करने का तो सबको समान अधिकार है। लेकिन अपनी-अपनी गति होती है। गति सभी के पास है। जो निम्न श्रेणी का है वह तीव्र गति पा सकता है और जो तीव्र गति वाला है वह निम्न में आ सकता है। इसलिए गोस्वामी जी ने भक्ति को ज़्यादा महत्व दिया। ज्ञान को कम दिया, वैराग्य को कम दिया, भक्ति को ज़्यादा महत्व दिया। तो साधन में जितनी तीव्र गति है, उसी का नाम भक्ति है।

ज्ञान और भक्ति, इनमें भेद तो है नहीं। भगवान की जानकारी करना ज्ञान है। और जानकारी के पश्चात लग जाना-अब हटना नहीं है। यह भक्ति है। तो दोनों एक हो गए-

ज्ञानहिं भगतिहिं नहिं कछु भेदा।
उभय हरहिं भव संभव खेदा।।

, , ,

अस विचार पंडित मोहि भजहीं।
पायहु ज्ञान भगति नहिं तजहीं।।

दोनों एक ही हैं, उनमें अंतर नहीं। और अगर कोई इन्हें अलग करके कहता है, कि ज्ञान अलग है, भक्ति अलग है, तो वह नहीं जानता। यह तो साधन सब एक ही हैं। ये ज्ञान, भक्ति, विवेक, वैराग्य तो विभिन्न प्रकार के उसके अवयव हैं। अंग-प्रत्यंग हैं। जैसे गाड़ी तो एक ही है। चक्का अलग है, रिम अलग है, टायर अलग है, बाडी अलग है-ये कितने पार्ट्स (अंग) होते हैं? और इन सबका मिलकर नाम है-गाड़ी। इस तरह से जितने भी साधन के अंग हैं सबको लेकर चलना चाहिए। इस प्रकार से जो साधक, साधना करते हैं, और तीव्रतर वैराग्य लाते हैं और गति लाते हैं। तो वो भाग्यशाली अपने गुरु के लाल, अपने भगवान के प्रिय बन जाते हैं। और सफल हो सकते हैं।

हरिः ओम